वर्तमान कृषि पद्धति – जैन दर्शन की दृष्टि में

डॉ. श्याम लाल गोदावत
भूतपूर्व अधिष्ठाता, राजस्थान कृषि महाविद्यालय
महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर 313001 (राज.)
Email : slgodawat@rediffmail.com
GSF Registration No. GSF/13-14/Delhi/61S

Abstract

जैन दर्शन के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय काल में भोगभूमिज मनुष्य दस प्रकार के कल्पवृक्षों से याचना कर बिना पुरूषार्थ के भोगोपभोग सामग्री प्राप्त करते थे। परन्तु तृतीय काल के अन्त में कल्पवृक्षों का अन्त होने पर प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने जनता को षट् कर्म (**कृषि**, असि, मसि, शिल्प, सेवा व वाणिज्य) का उपदेश देकर अपनी जीवन याचिका प्रारम्भ करने का मार्ग दिखाया। तभी से कृषि/खेती का व्यवसाय जनता ने अपने भरण पोषण करने के लिये प्रारम्भ किया। मानव ने उत्तरोत्तर वृद्धि करते हुए नाना प्रकार के खाद्यान्न, फल, फूल, सब्जियाँ, मसाले व अन्य वनस्पति का अपनी आवश्यक्तानुसार खेती करके उत्पादन करना प्रारम्भ किया।

अन्तराल में जनसंख्या की अत्याधिक वृद्धि के कारण खाद्यान्न का अभाव महसूस होने लगा। वर्तमान की आवश्यकता को देखते हुए कृषि वैज्ञानिकों ने अपने अथक शोध प्रयासों द्वारा विकसित उन्नत तकनीकियों के द्वारा हरित क्रांति (Green Revolution) के माध्यम से खाद्यान्न की कमी का निजाद दिलाकर देश को आत्मनिर्भर बनाया। इस हरित क्रान्ति को स्थिर बनाये रखने के लिये अधिक उत्पादन देने वाली किस्मों के प्रभाव को सफल करने हेतु विभिन्न प्रकार के उर्वरकों एवं जीवनाशी रसायनों का उपयोग प्रचलित हुआ। जिससे अत्यधिक उत्पादन के साथ ही जीव हिंसा का विस्फोट होना प्रारम्भ हुआ। इन आदानों में कीटनाशक, रोग रोधक दवाओं के प्रचुर मात्रा में छिड़काव, रसायनिक उर्वरको का अविवेकपूर्ण उपयोग, भूमि व बीजोपचार में रसायनों का प्रयोग, खाद्यान्नों के भण्डारण में जहरीली धुम्रक रसायनों का उपयोग व परम्परागत जुताई के विपरीत आधुनिक कृषि यन्त्रों द्वारा भूमि की जुताई इत्यादि।

इस लेख में कुछ ऐसी वैकल्पिक अहिंसक कृषि विधियों का उल्लेख किया गया है। जैसे – शून्य भू परिष्करण (Zero Tillage), अल्प भू परिष्करण (Minimum Tillage), कार्बनिक खेती (Organic farming), प्राकृतिक स्त्रोतों का प्रबन्धन (Management of natural resources), उन्नत बीजों का प्रयोग, बुवाई के समय में समन्वयता, कीट व रोग प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग, उपयुक्त फसल चक्र (Crop rotation) की पालना, प्राकृतिक कीट व रोग नियन्त्रण को बढ़ावा व संरक्षण देना, जीवाणु खादों (Bio-fertilizer) का उपयोग इत्यादि को अपनाकर काफी हद तक वर्तमान खेती पद्धति की तुलना में बिना उत्पादन में कमी किये हुये आरम्भिक, संकल्पिक एवं औद्योगिक हिंसा से निजात पाकर अहिंसक खेती की जा सकती है।

इस प्रकार जैन दर्शन के अहिंसा रूपी मौलिक सिद्धान्त को अंगीकरण कर खेती में वर्तमान स्थिति को न केवल सुधार सकते है अपितु उसे टिकाऊ व पर्यावरण अनुकूल भी किया जा सकता है। अतः जैन दर्शन शोधों द्वारा परिष्कृत एवं विकसित अहिंसा सिद्धान्त आधुनिक कृषि में समन्वयन मानव सभ्यता के लिए अति आवश्यकता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रीय आय में 35–40 प्रतिशत योगदान और 65–70 प्रतिशत आबादी का जीवनयापन कृषि पर आधारित है। मानव के भोगपभोग के लिये कृषि व्यवसाय ही एकमात्र आवश्यक उद्योग है। जैन दर्शन के तृतीय काल के अंत में कल्पवृक्षों का समाप्त होने पर प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का षट् कर्म उपदेश ग्रहण कर जनता ने अपने भरण पोषण के लिये कृषि का व्यवसाय प्रारम्भ किया था। तभी से यह व्यवसाय उत्तरोत्तर वृद्धि करते हुए आज तक विद्यमान है। मानव अपनी आवश्यकतानुसार कृषि व्यवसाय अपनाकर विभिन्न प्रकार के खाद्यान्न, फल, फूल, सब्जियां, मसाले इत्यादि का उत्पादन कर रहा है।

जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि के कारण खाद्यान्न संकट गहराने लगा व चारों तरफ भूखमरी फैलने लगी। वर्तमान की आवश्यकता को देखते हुए कृषि वैज्ञानिकों ने अपने अथक शोध प्रयासों द्वारा विकसित उन्नत तकनीकियों के द्वारा हरित क्रान्ति (Green Revolution) के माध्यम से खाद्यान्न की कमी का निजात दिलाकर देश को खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बनाया। इस हरित क्रान्ति को स्थिर बनाये रखने के लिये अधिक उत्पादन देने वाली किस्मों के प्रभाव को सफल बनाने हेतु विभिन्न प्रकार के उर्वरकों एवं जीवनाशी रसायनों का उपयोग प्रचलित हुआ। जिससे अत्यधिक उत्पादन के साथ–साथ ही जीव हिंसा का विस्फोट होना प्रारम्भ हुआ। इन आदानों में कीटनाशक, रोगरोधक दवाओं का प्रचुर मात्रा में छिड़काव, रासायनिक उर्वरकों का अविवेकपूर्ण उपयोग, भूमि व बीजोपचार में रसायनों का प्रयोग, खाद्यान्नों के भण्डारण में जहरीली धुम्रक रसायनों का उपयोग व परम्परागत जुताई के विपरीत आधुनिक यंत्रों के द्वारा भूमि की जुताई इत्यादि की प्रमुख भूमिका है। अतः वर्तमान में कृषि/खेती व्यवसाय पूर्ण रूप से आरम्भी, उद्योगी व संकल्पी हिंसा से गर्भित है मानव अपनी स्वार्थ सिद्धी के लिए किसी भी असहाय जीवों की हिंसा करने में नहीं हिचकिचाता है। हर जीव मात्र को को जिन्दा रहने का पूरा–पूरा अधिकार है। शुद्ध द्रव्यार्थिक दृष्टि से प्रत्येक जीव सदृश्य है। जो कोई भी जीव को कष्ट देगा, हिंसा करेगा साक्षात् परमात्मा को कष्ट देना है।

वर्तमान कृषि से सम्बन्धित जीव हिंसा के बारे में विश्लेषण

जैन दर्शन में हिंसा के चार भेद बताए हैं – 1. आरम्भी 2. उद्योगी 3. संकल्पी 4. विरोधी

आरम्भी हिंसा

गृहस्थ सम्बन्धी कार्य में जो हिंसा होती है उसे आरम्भी हिंसा कहते हैं।

उद्योगी हिंसा

कृषि, वाणिज्य, व्यापारादि कार्यों में जो हिंसा होती है उसे उद्योगी हिंसा कहते हैं।

संकल्पी हिंसा

दूषित भावना सहित दूसरे जीवों को मारने का भाव उत्पन्न होने को संकल्पी हिंसा कहते हैं। कृत, कारित व अनुमोदन तीनों में समान दोष लगता है। **(अहिंसामृतम, अध्याय 2, पृ. 20)**

वर्तमान कृषि पद्धति आरम्भी, उद्योगी व संकल्पी हिंसा से गर्भित है। प्रथम तीन प्रकार की हिंसा से गृहस्थ पूर्ण रूप से विरक्त नहीं हो सकता परन्तु यथासंभव वैकल्पिक तरीके अपनाकर इन तीनों प्रकार की हिंसाओं को कम करते हुए पाप कर्मों के बन्धन में मध्यस्तता प्राप्त कर सकता है। आदर्श नागरिक को संकल्पी हिंसा, जो निन्दनीय है का त्यागी होना नितांत आवश्यक है अन्यथा उसे हिंसा का फल भोगना पड़ेगा।

व्यक्तिगत प्रयोगिक अनुभव के आधार पर

जैन दर्शन की दृष्टि में सम्पूर्ण विश्व में अनन्तानंत जीव मुख्यतः तीन रूप से जन्म ग्रहण करते हैं–

1. सम्मूर्च्छन जन्म (Spontaneous generation) 2. गर्भ जन्म (Utarian birth) 3. उपपाद जन्म (Instantaneous birth)

(तत्वार्थ सूत्र, अध्याय 2 (31)

अपने शरीर के योग्य अनुकूल वातावरण में चारों ओर से पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण कर अवयवों (शरीर) की रचना करना सम्मूर्च्छन जन्म है। एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जीवों का जन्म सम्मूर्च्छन से ही होता है। कृषि से सम्बन्धित सारे त्रस जीवों की उत्पत्ति अनुकूल वातावरण (तापक्रम, आर्द्रता, मौसम, जलवायु) में फसल के किसी विशेष स्थान (पुष्पों के समूह) पर सम्मूर्च्छन रूप से अधिक दिखाई देते हैं। अतः सम्मूर्च्छन से जीव उत्पत्ति का निमित्त अनुकूल **वातावरण** व उपयुक्त **स्थान** है। ये दोनों उपलब्ध होने पर अपने कर्मों के अनुसार विग्रह गति का जीव (आत्मा) पुद्गल वर्गणा अवयव में आकर अपना स्थान प्राप्त कर लेती है व त्रस जीव का जन्म हो जाता है। अगर सम्मूर्च्छन जन्म के अनुकूल वातावरण के समय फसल के पुष्प समूह अवस्था उपलब्ध नहीं हो तो सम्मूर्च्छन से जीवों की उत्पत्ति नहीं होगी क्योंकि उपयुक्त स्थान उपलब्ध नहीं है। अतः फसल के बुआई व सिंचाई के समय में परिवर्तन करके फसल की पुष्प अवस्था को आगे पीछे किया जा सकता है। जिससे अनुकूल वातावरण व स्थान दोनों एक साथ उपलब्ध नहीं होने से जीवों की सम्मूर्च्छन से उत्पत्ति नहीं होगी और हिंसा में कुछ स्तर तक (एक देश) निजात मिल सकता है।

साधारणतया फसल की कटाई के बाद खाद्यान्नों के भण्डारण के दौरान बहुत से नाशीकीट नुकसान पहुंचाते है। इससे बचने के लिए जहरीले रसायनिक कीटनाशी धुम्रक (Fumigant) प्रयोग में लिए जाते हैं जिससे जीव हिंसा के साथ–साथ धुम्रक रसायनों का अनाज पर अवशेष (Residual effect) रह जाता है जो मानव के स्वास्थ्य के नुकसानदेह है। खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखने के लिए व जीव हिंसा से बचने के लिए खाद्यान्नों को पूरा–पूरा सुखाकर उसमें करीब 8–10 प्रतिशत कम नमी रहे उस अनाज को ठण्डे (17-20°C) व सुखे स्थान पर जहाँ आर्द्रता अधिक न हो भण्डारण करने पर अनाज में सम्मूर्च्छन से कीड़े उत्पन्न नहीं होंगे क्योंकि यह वातावरण (ठण्डा, सुखा, कम नमी) अनाज भण्डारण में सम्मूर्च्छन जीव उत्पन्न होने में सहायक नहीं है। अतः इस विधि से अनाज खराब नहीं होगा व जीव हिंसा से बचा जा सकता है।

पिछले पांच शतक से वर्तमान कृषि पद्धति द्वारा जीव हिंसा के साथ–साथ प्राकृतिक संसाधन मिट्टी, पानी, वायु व पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। जो इस प्रकार है।

1. कीटनाशकों व अन्य रसायनों का खाद्य पदार्थों में अवशेष प्रभाव (Residual effect) बढ़ना।
2. सघन कृषि के अन्तर्गत भू–गर्भ जलस्तर का गिरना व जल प्रदूषित होना।
3. खाद्यान्नों की गुणवत्ता में कमी होना।
4. कीटनाशकों के अविवेकपूर्ण उपयोग से पर्यावरण प्रदूषण व स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ना।
5. उचित फसल चक्र न अपनाने व सघन कृषि पद्धति से भूमि की दशा खराब होना।
6. कार्बनिक, हरी खाद, जैविक उर्वरक इत्यादि का उपयोग कम होने से सूक्ष्म तत्व की कमी होना।
7. भारी तत्व जैसे– आर्सेनिक, लेड, केडमियम इत्यादि का संचय होना।

8. फसलों में रोग व कीट प्रतिरोधी क्षमता का घटना।

9. रोग व कीटों की जीवनाशियों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ना।

10. असन्तुलित मात्रा में उर्वरकों के कारण तत्वों का असन्तुलन, ह्रास व अनुपलब्धता।

उपरोक्त प्रतिकूल परिस्थितियों में मानव जीवन व टिकाऊ खेती खतरे में पड़ती हुई दृष्टिगोचर हो रही है। अतः इसके समाधसान के लिये वैकल्पिक अहिंसक व कारगर कृषि के बारे में सोचने के लिये बाध्य होना पड़ा। टिकाऊ खेती (Sustainable agriculture) के लिये कुछ प्रभावकारी विकल्प निम्न प्रकार हैं :–

1. जैविक खेती (Organic farming)
2. शून्य भू परिष्करण (Zero tillage)
3. अल्प भू परिष्करण (Minimum tillage)
4. उपयुक्त फसल चक्र (Proper crop rotation)
5. अधिक उपज देने वाली रोग कीट प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग
6. तरल जैविक उत्प्रेरकों का उपयोग (Use of liquid bio-enhancers)
7. होमा फार्मिंग (Homa farming)
8. जीवाणु खाद का उपयोग (Use of bio-fertilizer)
9. कार्बनिक विधि से भण्डारण (Organic storage of food)

1. **जैविक खेती** (Organic farming)

पर्यावरण में स्वच्छता तथा प्राकृतिक संतुलन बनाये रखकर मृदा, जल और वायु को प्रदूषित किये बिना, भूमि को स्वस्थ एवं सक्रिय रखकर दीर्घकालिक उत्पादन प्राप्त करने को ही जैविक खेती या प्राकृतिक खेती कहते हैं। यह एक ऐसी खेती पद्धति है जिसमें फसल उत्पादन में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, रोगनाशकों, खरपतवारनाशकों तथा वृद्धि नियामकों व जहरीले धुम्रक के उपयोग के स्थान पर गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, जीवाणु कल्चर, फसल चक्र, फसल अवशेष, द्विदलीय फसलें उगाकर और कीट, रोग व खरपतवार नियंत्रण के लिये जैविक स्त्रोतों का ही प्रयोग करते हुए टिकाऊ खेती (Sustainable agriculture) द्वारा अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

2. **शून्य भू–परिष्करण** (Zero tillage)

फसल उत्पादन हेतु मृदा में किसी भी प्रकार की कर्षण क्रिया न करने को शून्य भू–परिष्करण कहते हैं। पिछली फसल की कटाई के बाद बिना किसी कर्षण क्रिया के सीधी बीजाई की जाती है। शून्य भू–परिष्करण अपनाने वाली मृदायें सामान्यतया सघनता (Compaction), जैवांश पदार्थों की बढ़ोतरी, पानी के ह्रास की कमी, केंचुओं की जनसंख्या में वृद्धि, मृदा की रन्ध्रता (Porosity) एवं परगम्यता (Permeability) में बढ़ाव जिससे सामान्य विधियों से अधिक या उसके समकक्ष उत्पादन प्राप्त होता है।

3. **अल्प भू–परिष्करण** (Minimum tillage)

इस विधि में फसल उत्पादन हेतु मृदा में कम से कम कर्षण क्रियायें उपयोग में ली जाती है।

4. उपयुक्त फसल चक्र (Proper crop rotation)

किसी निश्चित अवधि में निश्चित क्षेत्र पर कम खर्च व अत्यधिक मुनाफा लेते हुए फसलों को पूर्व निर्धारित योजनानुसार बोना फसल चक्र कहलाता है। अलग–अलग जलवायु में अलग–अलग फसल चक्रों की सिफारिश की गई है।

5. अधिक उपज वाली कीट–रोगरोधी किस्मों का प्रयोग

सब से सुरक्षित, उपयोगी व अहिंसक खेती में अधिक उपज देने वाली कीट–रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करना है। कृषि वैज्ञानिकों ने सब फसलों में ऐसी अनेकों किस्में विकसित की है जिनको उगाकर मुख्य समस्याओं का समाधान एक साथ किया जा सकता है। आजकल अनेकों संकर (Hybrid), संकुल (Composite) व सिंथेटिक किस्में उपलब्ध है। जिनकी सहायता से अधिक उत्पादन के साथ–साथ अधिक गुणवत्ता व रोग–कीटरोधी, क्षमता उपलब्ध रहती है।

6. तरल जैविक उत्प्रेरकों का उपयोग (Use of liquid bio-enhancers)

विभिन्न तरल जैविक उत्प्रेरकों के उपयोगों द्वारा भूमि की उर्वरा शक्ति व पौधों की बढ़वार में वृद्धि होती है। ये तरल जैविक उत्प्रेरक निम्न प्रकार के हैं :–

(a) पंचाग्वाया कृषि (Panchagvaya krishi)

(b) जीवामित्रा (Jiwamrita)

(c) बीडी लिक्विड मेन्योर (BD liquid manure)

(d) अमृतपानी (Apritpani)

(f) वर्मी वाश (Vermi wash)

(g) बायो–सोल (Bio-sol)

(h) बायोडाइनेमिक्स (Bio-dynamics)

(i) ऋषि कृषि (Rishi krishi)

अधिक विस्तार के लिये संदर्भ –

Pathak, R.K. 2010, Homa Javik Krishi and Use of Liquid Bio-enhancer for Sustainable Horticulture, National Seminar on Pricision Farming in Horticulture, December 28-29, 327-336

7. होमा फार्मिंग (Homa farming)

कृषि में यज्ञ का उपयोग – होमा फार्मिंग (अग्निहोत्रा) टिकाऊ खेती का वह रूप है जिसमें सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय वातावरण को हवन क्रिया द्वारा शुद्ध एवं अरोग्य किया जाता है तथा हवन से प्राप्त राख का उपयोग कृषि में पोषक तत्व एवं पीड़कनाशक के रूप में किया जाता है। हवन में अनेकों द्रव्यों की आहुति मंत्रोच्चारण के साथ दी जाती है जिससे वातावरण में नकारात्मक अप्रशस्त पुद्गल वर्गणाओं के स्थान पर सकारात्मक प्रशस्त पुद्गल वर्गणाओं का संचय होता है जिसके परिणामस्वरूप प्रदूषण समाप्त होकर टिकाऊ कृषि के अनुकूल स्वस्थ पर्यावरण प्राप्त होता है ऐसे स्वस्थ वातावरण में नाशीकीटों का प्रकोप भी मध्यस्त हो जाता है। आजकल अनेकों संस्थायें देश–विदेश में कृषि पर मंत्रों का अनुसंधान कर रही है। इस क्षेत्र में काफी उत्साहवर्द्धक परिणाम सामने आए हैं।

जैनागम में भी अनेक प्रकार के हवन, विधान, पूजा आदि का पर्यावरण शुद्धि व विश्वशांति के प्रावधान दर्शाये गए हैं। जिनेन्द्र भगवान का जलाभिषेक, शांतिधारा, पंचामृत अभिषेक इत्यादि मंत्र गर्भित होने से पीड़कनाशक सिद्ध हुए हैं। अभिमंत्रित जल से सिंचाई करने पर उत्पादन में वृद्धि भी दर्शायी गयी है।

(मंत्र विज्ञान, अध्याय 3, पृ. 21)

Homa farming works on the principle that
"you heal the atmosphere and the healed atmosphere will heal you"

8. जीवाणु खाद का उपयोग (Use of bio-fertilizer)

जीवाणु खादों का महत्व पहले की अपेक्षा अब कई गुणा बढ़ गया है। ये खाद जहां एक ओर नत्रजन व फास्फोरस जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते हैं वहीं दूसरी ओर रासायनिक उर्वरकों की तुलना में प्रदूषण को भी कम करते हैं। इन जीवाणु खादों के अन्तर्गत राइजोबियम, हरित शैवाल व सायनो बैक्टिरिया पीएसबी मुख्य हैं।

9. कार्बनिक विधि से भण्डारण (Organic storage of food)

खाद्यान्नों के भण्डारण के दौरान बहुत से नाशीकीट नुकसान पहुंचाते हैं। इससे बचने के लिये जहरीले रासायनिक कीटनाशी धुम्रक प्रयोग में लिये जाते हैं। परन्तु इन धुम्रक रसायनों का अनाज पर अवशेष रह जाता है व इसकी धुम्र मानव के लिये भी नुकसानदायक है। खाद्य पदार्थों को कार्बनिक तरीके से खेती के साथ–साथ कार्बनिक तरीके से भण्डारण किया जाये तो हानिकारक रसायनों के प्रतिकूल प्रभाव से बचा जा सकता है।

उपरोक्त कृषि पद्धतियों को अपनाकर वर्तमान कृषि उद्योग में आरम्भी, उद्योगी व संकल्पी हिंसा को कम करते हुए जैन दर्शन के अहिंसा रूपी मौलिक सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए टिकाऊ खेती (Sustainable agriculture) द्वारा मानव जीवन के भरण पोषण का महत्वपूर्ण पर्यावरण अनुकूल कृषि व्यवसाय सुनिश्चित किया जा सकता है।

"हिंसा प्रसूतानि सर्व दुःखानि"

हिंसा सम्पूर्ण दुःखों को जन्म देती है।

अहिंसा – आत्म शुद्धि एवं पर्यावरण सुरक्षा का माध्यम है।